

श्रीमद्भागवत स्कन्ध 8 अध्याय 9: मोहिनी और अमृत-वितरण

14 September 2026



असुर अमृत छीनकर कलह में पड़ चुके हैं — तभी एक अद्भुत कन्या प्रकट होती है और, उन्हीं की अनुमति से, कलश अपने हाथों में ले लेती है। देवताओं और असुरों को अलग-अलग पंक्तियों में बैठाकर वह अमर अमृत उन देवताओं को पिलाती है जिन्होंने इसे भक्ति से अर्जित किया था।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

श्रीमद्भागवत विज्ञम में आपका पुनः स्वागत है — श्रीमद्भागवत महापुराण की पवित्र कथाओं और शिक्षाओं की एक भक्तिमयी यात्रा। आठवें स्कन्ध का यह नवम अध्याय इस रहस्य को उजागर करता है कि एक ही श्रम, एक ही घड़ी में, एक पक्ष को जीवन क्यों देता है और दूसरे को सर्वथा रिक्त क्यों छोड़ देता है।

अध्याय की जानकारी

- ग्रन्थ: श्रीमद्भागवत महापुराण
- स्कन्ध: 8 (आठवाँ स्कन्ध)
- अध्याय: 9 (नवम अध्याय)

- अध्याय शीर्षक: मोहिनी रूप में भगवान का अमृत-वितरण
- मुख्य वक्ता: श्रीशुकदेव गोस्वामी, राजा परीक्षित से कहते हुए — मोहक रूप में भगवान के वचन सहित
- मुख्य श्रोता: राजा परीक्षित
- मुख्य स्थल: क्षीरसागर का तट; अमृत-वितरण हेतु सज्जित मण्डप
- केन्द्रीय विषय: भगवान अपने मोहक रूप में असुरों का विश्वास जीतकर देवताओं को अमृत देते हैं; राहु का शिरच्छेद; यह शिक्षा कि भगवान के चरणों की शरण ही सब कुछ निर्धारित करती है
- प्रमुख श्लोक श्रेणी: स्कन्ध 8, अध्याय 9, श्लोक 1–29
- मुख्य संस्करण: गीता प्रेस श्रीमद्भागवत महापुराण

पिछले अध्याय का सन्दर्भ

अष्टम अध्याय में मथे सागर ने अपने रत्न दिए, जिसकी परिणति देवी लक्ष्मी के प्राकट्य में हुई, जिन्होंने केवल भगवान विष्णु को चुना। फिर अमरत्व का अमृत उठा, एक अद्भुत पुरुष द्वारा धारित, और असुरों ने कलश छीनकर “मैं पहले!” चिल्लाते हुए कलह आरम्भ कर दी। उनका विवाद सुलझाने हेतु भगवान ने एक अत्यन्त अद्भुत मोहक रूप धारण किया। यह अध्याय उस रूप के कार्य को उठाता है।

असुर मोहक कन्या को देखते हैं

आपस की सारी मित्रता खोकर, डाकुओं-सा बर्ताव करते और परस्पर कलश के लिए झपटते-झगड़ते हुए, असुरों की दृष्टि सहसा उस विस्मयकारी कन्या पर पड़ी, जो निकट चली आ रही थी।

श्रीशुक उवाच

तेऽन्योन्यतोऽसुराः पात्रं हरन्तस्त्यक्तसौहृदाः ।

क्षिपन्तो दस्युधर्माण आयान्तीं ददृशुः स्त्रियम् ॥ १ ॥

श्रीशुक उवाच तेऽन्योन्यतोऽसुराः पात्रं हरन्तस्त्यक्तसौहृदाः क्षिपन्तो दस्युधर्माण आयान्तीं ददृशुः स्त्रियम्

अर्थ: श्रीशुक ने कहा — समस्त मैत्री त्यागकर और लुटेरों की रीति अपनाकर, एक-दूसरे से कलश छीनते और गाली देते हुए असुरों ने एक स्त्री को आते देखा। (स्कन्ध 8, अध्याय 9, श्लोक 1)

काम से उद्दीप्त होकर असुर उसके पास दौड़े, उसके अद्भुत सौन्दर्य की प्रशंसा करते हुए, और पूछा: वह कौन है, किसकी पुत्री, और क्यों आई है? सम्भवतः, उन्होंने कहा, दयालु विधाता ने उसे समस्त प्राणियों को आनन्दित करने भेजा है। फिर, कश्यप ऋषि के पुत्र और परस्पर भाई कहकर, उन्होंने उससे शान्ति लाने और उनके पुरस्कार का समान बँटवारा करने की प्रार्थना की, जिससे उनमें कलह समाप्त हो।

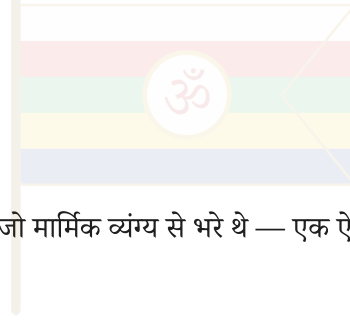


समस्त मित्रता त्यागकर अमृत-कलश पर कलह में पड़े असुर उस अद्भुत सुन्दरी को आते देखते हैं और उससे प्रार्थना करते हैं कि वह प्रतिफल का न्यायपूर्वक बँटवारा कर दे (श्लोक 1-7)।

समस्त मैत्री त्यागकर और अमृत-कलश के लिए कलह में पड़कर असुर उस अद्भुत कन्या को निकट आते देखते हैं और उससे पुरस्कार का उचित बँटवारा करने की प्रार्थना करते हैं (श्लोक 1-7)।

गलत जगह रखा विश्वास — भगवान की कोमल चेतावनी

भगवान ने, अपने स्त्री-रूप में, सुन्दरता से हँसकर उन्हें ऐसे वचनों में उत्तर दिया जो मार्मिक व्यंग्य से भरे थे — एक ऐसी चेतावनी जिसे सुनने के लिए वे बहुत अधिक मोहित थे।



श्रीभगवानुवाच

कथं कश्यपदायादाः पुंश्चल्यां मयि सङ्गताः ।

विश्वासं पण्डितो जातु कामिनीषु न याति हि ॥ ९ ॥

श्रीभगवानुवाच कथं कश्यपदायादाः पुंश्चल्यां मयि सङ्गताः विश्वासं पण्डितो जातु कामिनीषु न याति हि

अर्थ: भगवान ने कहा — हे कश्यप-पुत्रो, तुमने मुझ चंचल स्त्री पर विश्वास कैसे किया? बुद्धिमान पुरुष ऐसी स्त्रियों पर कभी विश्वास नहीं करता। (स्कन्ध 8, अध्याय 9, श्लोक 9)

जो स्त्री बिना संरक्षण के रहती है, उसने जोड़ा, उसकी मैत्री वानर, सियार और श्वान के समान चंचल होती है, जो शीघ्र ही एक साथी छोड़कर दूसरे की ओर हो लेते हैं। परन्तु असुर, इन विनोदपूर्ण वचनों से चेतने के बजाय आश्चर्य होकर, हँसे और अमृत-कलश उसे सौंप दिया। कलश लेकर भगवान ने, कोमल मुस्कान के साथ, कहा कि वे अमृत का बँटवारा केवल एक शर्त पर करेंगी: कि वे जो कुछ करें, चाहे वह उचित लगे या अनुचित, असुर उसे स्वीकार करें। उसकी वास्तविक महिमा से अनजान असुर-नायकों ने सहमति दे दी।



सुन्दरी पर मोहित और उसकी इस चेतावनी को अनसुना करते हुए कि बुद्धिमान व्यक्ति कभी चंचल स्त्री पर विश्वास नहीं करता, असुर उसे अमृत-कलश सौंप देते हैं और जो वह करे उसे स्वीकार करने को सहमत हो जाते हैं (श्लोक 8-12)।

कन्या पर मोहित और उसकी इस चेतावनी से अनजान कि बुद्धिमान चंचल स्त्री पर कभी विश्वास नहीं करता, असुर उसे अमृत-कलश सौंप देते हैं और जो वह करे उसे स्वीकार करने पर सहमत हो जाते हैं (श्लोक 8-12)।

अमृत देवताओं को दिया जाता है

फिर, उपवास और स्नान करके, यज्ञाग्नि को प्रसन्न करके, और ब्राह्मणों तथा प्राणियों को दान देकर, देवता और असुर नए वस्त्र पहनकर पूर्वाभिमुख कुश-आसनों पर बैठ गए, एक ऐसे मण्डप में जो धूप की सुगन्ध से भरा और पुष्पों तथा दीपों से सज्जित था। उस कक्ष में वह सुन्दर कन्या कलश हाथ में लिए प्रवेश करती है, और वहाँ उपस्थित सब — देवता और असुर समान रूप से — उसकी मनोहर उपस्थिति और मुस्कानयुक्त दृष्टि से पूर्णतः मोहित हो गए।

असुरों को अमृत देना अनुचित समझकर — जैसे सर्पों को दूध पिलाना — भगवान् अच्युत ने दोनों जातियों को अलग-अलग पंक्तियों में, प्रत्येक को अपने ही लोगों के बीच, बैठाया। फिर, असुरों को मधुर आकर्षण और विनम्र वचनों से मोहित करते हुए, वे कलश उन देवताओं तक ले गए जो पृथक बैठे थे और उन्हें वह अमृत पिलाया जो वृद्धावस्था और मृत्यु को रोकता है। उसके प्रति अपने प्रेम और अपनी प्रतिज्ञा के प्रति आदर के कारण, और स्त्री से झगड़ने को हेय समझकर, असुर मौन रहे और कुछ अप्रिय न बोले।



दोनों जातियों को पृथक् पंक्तियों में बैठाकर, मोहिनी रूप में भगवान मधुर वचनों से असुरों को बहलाते हैं और अमृत उन देवताओं को पिलाते हैं जिन्होंने उसे अर्जित किया था (श्लोक 19-23)।

दोनों जातियों को अलग-अलग पंक्तियों में बैठाकर, भगवान अपने मोहक रूप में असुरों को कोमल वचनों से मोहित करते हैं और अमरत्व का अमृत उन देवताओं को पिलाते हैं जिन्होंने इसे अर्जित किया था (श्लोक 19-23)।

राहु का शिरच्छेद, और भगवान का मूल रूप

इसी बीच, स्वर्भानु नामक एक असुर — राहु — देवता का वेश धारण करके देवताओं की पंक्ति में अमृत पीने घुस गया। परन्तु चन्द्रदेव और सूर्यदेव, जिनके बीच वह बैठा था, ने उसे पहचानकर उसकी ओर संकेत किया।

देवलिङ्गप्रतिच्छन्नः स्वर्भानुर्देवसंसदि ।

प्रविष्टः सोममपिबच्चन्द्रार्काभ्यां च सूचितः ॥ २४ ॥

देवलिङ्गप्रतिच्छन्नः स्वर्भानुर्देवसंसदि प्रविष्टः सोममपिबच्चन्द्रार्काभ्यां च सूचितः

अर्थ: देवता के वेश में छिपकर स्वर्भानु देवताओं की सभा में प्रवेश करके अमृत पीने लगा; पर चन्द्रदेव और सूर्यदेव ने उसकी ओर संकेत कर दिया। (स्कन्ध 8, अध्याय 9, श्लोक 24)

तुरन्त भगवान ने अपने क्षुर-सी धार वाले चक्र से, पीते-पीते ही, उसका सिर काट दिया। अमृत से अछूता उसका धड़ निर्जीव गिर पड़ा; पर उसका सिर, जिस तक अमृत पहुँच चुका था, अमर हो गया। ब्रह्मा ने उस सिर को एक ग्रह बना दिया — राहु — जो सूर्य और चन्द्र के प्रति वैर रखता है और ग्रहण के समय उन पर आक्रमण करता है। जब देवताओं द्वारा अमृत लगभग पी लिया गया, तब विश्व के रक्षक भगवान ने असुर-सेनापतियों के सामने अपना मूल रूप पुनः धारण कर लिया।



देवता का वेश धारण किए असुर राहु अमृत पी लेता है और सूर्यदेव तथा चन्द्रदेव द्वारा पहचान लिया जाता है; भगवान चक्र से उसका शिरच्छेद करते हैं, और वह अमर शिर राहु ग्रह बन जाता है (श्लोक 24-26)।

देवता के वेश में असुर राहु अमृत पीता है और सूर्यदेव तथा चन्द्रदेव द्वारा पहचान लिया जाता है; भगवान चक्र से उसका सिर काट देते हैं, और वह अमर शिर राहु ग्रह बन जाता है (श्लोक 24-26)।

एक ही प्रयास, विपरीत फल

श्रीशुकदेव इस अध्याय का समापन उन सबसे निकाली एक शिक्षा से करते हैं। देवताओं और असुरों ने एक ही स्थान पर, एक ही समय, एक ही साधन और सामग्री से, एक ही उद्देश्य से श्रम किया — फिर भी उन्हें नितान्त भिन्न फल मिले।



एवं सुरासुरगणाः समदेशकाल-

हेत्वर्थकर्ममतयोऽपि फले विकल्पाः ।

तत्रामृतं सुरगणाः फलमञ्जसापु-

र्यत्पादपङ्कजरजःश्रयणान्न दैत्याः ॥ २८ ॥

एवं सुरासुरगणाः समदेशकालहेत्वर्थकर्ममतयोऽपि फले विकल्पाः तत्रामृतं सुरगणाः फलमञ्जसापुर्त्यत्पादपङ्कजरजःश्रयणान्न दैत्याः

अर्थ: यद्यपि देवताओं और असुरों ने एक ही स्थान-काल में, एक ही प्रयास, साधन और उद्देश्य से कार्य किया, उनके फल भिन्न रहे: देवताओं को अमृत सहज ही फल-रूप में मिला, क्योंकि उन्होंने भगवान के चरण-कमलों की रज की शरण ली — पर असुरों ने नहीं। (स्कन्ध 8, अध्याय 9, श्लोक 28)

यह कथा का एक साधारण विवरण मात्र नहीं, अपितु सम्पूर्ण अध्याय का सार है। भगवान कोई निर्विशेष नियम नहीं हैं जो समान श्रम के बदले समान वेतन बाँटते हों; वे एक व्यक्ति हैं, और वे इस पर उत्तर देते हैं कि उनकी ओर कैसे बढ़ा जाए, न कि केवल इस पर कि हाथों ने कितना परिश्रम किया। देवता असुरों से अधिक योग्य या चतुर नहीं थे — उन्हें अलग जो बनाता था वह यह कि उनके हृदय भगवान के चरणों की ओर

पहले ही मुड़ चुके थे, इससे पहले कि उनके हाथ मन्थन-रज्जु को छूते। यही वह एक अन्तर है जिसे असुर, अपने समस्त बल के बावजूद, कभी खरीद या छीन नहीं सके, चाहे उन्होंने अमृत-कलश को कितना भी कसकर पकड़ा हो (श्लोक 28)।

जो कुछ हम केवल शरीर, धन और सन्तान के लिए करते हैं, वे सिखाते हैं, वह अन्ततः निष्फल है; पर वही कर्म, अपने दिव्य स्वरूप पर दृष्टि रखकर और भगवान को अर्पित करके किए जाएँ, फलदायी हो जाते हैं और सबका कल्याण करते हैं — ठीक जैसे वृक्ष की जड़ सींचना हर शाखा को पोषित करता है।

इस अध्याय की प्रमुख शिक्षाएँ

1. हम जिसकी शरण लेते हैं वही फल तय करती है। देवताओं और असुरों ने समान कार्य किया, फिर भी केवल देवताओं ने, जिन्होंने भगवान के चरणों की शरण ली, अमृत पाया। केवल प्रयास फल नहीं तय करता; हृदय की शरण तय करती है (श्लोक 28)।
2. मोह स्पष्ट चेतावनियों को भी अनसुना कर देता है। भगवान ने असुरों को खुले शब्दों में कहा कि “चंचल स्त्री” पर विश्वास न करें, फिर भी मोहित होकर उन्होंने उसे ही अमृत सौंप दिया। जब कामना शासन करती है, तब खुले वचन में कही सत्य भी अनसुनी रह जाती है (श्लोक 9-11)।
3. भगवान अपने सच्चे भक्तों की रक्षा करते हैं। अपने वचन को तोड़े बिना, भगवान ने सुनिश्चित किया कि अमृत भक्त देवताओं तक पहुँचे। दिव्य कृपा भारी विषमता में भी सच्च्यों की रक्षा करती है (श्लोक 20-21)।
4. दिव्य प्रयोजन हेतु छल भगवान की अपनी लीला है। भगवान का मोहक रूप असत्य नहीं, अपितु धर्म की रक्षा और बिना खुले युद्ध के व्यवस्था बहाल करने हेतु उनकी योगमाया का कार्य है (श्लोक 8, 12)।
5. भगवान को अर्पित कर्म चिरस्थायी फल देता है। केवल शरीर और उसकी कामनाओं के लिए किया कर्म नष्ट होता है; वही कर्म भगवान को अर्पित होकर, वृक्ष की जड़ सींचने की भाँति, सबको पोषित करता है (श्लोक 29)।

एक भक्तिमय चिन्तन

यह अध्याय एक शान्त भेद पर घूमता है। इस क्षण देवता और असुर लगभग एक-दूसरे के प्रतिबिम्ब हैं: दोनों ने एक ही सागर मथा, एक ही श्रम सहा, एक ही सुगन्धित मण्डप में एक ही पुरस्कार की प्रतीक्षा में बैठे। बाहर से उनमें कुछ भेद नहीं। फिर भी एक दल अमरत्व का अमृत पीता है और दूसरा रिक्त रह जाता है। श्रीशुकदेव हमें ठीक-ठीक बताते हैं कि क्यों — देवताओं ने भगवान के चरण-कमलों की रज की शरण ली थी, और असुरों ने नहीं। यह एक मार्मिक स्मरण है कि आध्यात्मिक जीवन अन्ततः हमारे प्रयासों के दृश्य परिमाण से नहीं मापा जाता। दो व्यक्ति ठीक वही कर्तव्य, साथ-साथ, समान परिश्रम से कर सकते हैं; एक कर्म को फलदायी और दूसरे को रिक्त क्या बनाता है — यह हृदय की दिशा है, कि कर्म भगवान को अर्पित है या स्वयं के लिए हथियाया गया। असुरों ने अपने बल और चातुर्य पर विश्वास किया, और अमृत पहले छीन भी लिया; पर क्योंकि उन्होंने स्वयं की शरण ली, वह उनकी उँगलियों से फिसल गया। जड़ को सींचना, केवल पत्तों को नहीं, यही हर सामान्य कर्म को भगवान को अर्पण के रूप में जीना है।

एक दैनिक भाक्ते-अभ्यास

आज एक सामान्य कार्य चुनें — आपका काम, कोई कर्तव्य जिसे आप वैसे भी करते — और उसे आरम्भ करने से पूर्व सचेत रूप से भगवान के चरणों की शरण लें, उस कर्म को “ॐ नमो भगवते वासुदेवाय” के शब्दों से उन्हें अर्पित करें। कार्य करते हुए स्मरण रखें कि आपके कर्म का परिमाण नहीं, अपितु हृदय की शरण उसे फलदायी बनाती है। इसे अपनी “जड़ की सिंचाई” बनने दें: वही कर्म जिसे आप वैसे भी करते, अब चुपचाप एक अर्पण में बदल गया।

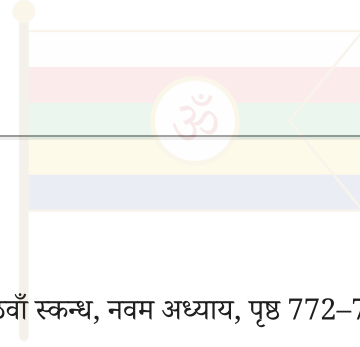
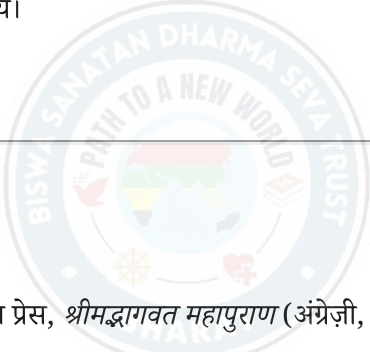
उपसंहार

यह अध्याय हमें एक ही उज्ज्वल सत्य देकर विदा करता है: हमारे श्रम का फल प्रयास नहीं, शरण तय करती है। देवताओं और असुरों ने एक ही सागर मथा और एक ही सुगन्धित मण्डप में बैठे, फिर भी अमृत केवल उन्हें मिला जिनका हृदय पहले ही भगवान के चरण-कमलों की ओर मुड़ चुका था — क्योंकि भगवान स्वयं, मोहिनी के अद्भुत रूप में कार्य करते हुए, अपना वचन तोड़े बिना, जो भी उनकी शरण लेता है उसकी रक्षा और पालन करते हैं। हम भी हर साधारण कर्म उन्हीं चरण-कमलों में अर्पित करें, ताकि हमारा किया हुआ अन्ततः हमारे पास अमृत बनकर लौटे।

श्रीमद्भागवत का दिव्य ज्ञान हमारे हृदयों में शुद्ध भक्ति जाग्रत करे।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

जय श्री माधव।



सन्दर्भ एवं आभार

- मुख्य संस्करण: गीता प्रेस, श्रीमद्भागवत महापुराण (अंग्रेज़ी, सम्पूर्ण), आठवाँ स्कन्ध, नवम अध्याय, पृष्ठ 772–774।
- शृंखला: श्रीमद्भागवतम् विज्ञम · विश्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट।
- पण्डित डॉ. श्री काशीनाथ मिश्र के आध्यात्मिक मार्गदर्शन एवं अनुशंसा के अनुरूप प्रस्तुत।

यह लेखक के अपने शब्दों में एक मौलिक, निष्ठापूर्ण पुनर्कथन है, जिसमें संक्षिप्त उद्धृत श्लोक देवनागरी तथा लिप्यन्तरण में दिए गए हैं और उनके अर्थ सारांश-रूप में हैं। यह किसी एक प्रकाशक के निरन्तर अनुवाद अथवा भाष्य का पुनरुत्पादन नहीं है। किसी प्रकाशक से किसी सम्बद्धता अथवा उसके अनुमोदन का संकेत नहीं किया गया है।

॥ हरि ॐ तत्सत् ॥

जय श्री माधव

ऑनलाइन पढ़ें: kalkiabatara.org/hi/blog-srimad-bhagavatam-canto-8-chapter-9-the-lord-as-mohini-distributes-the-nectar-hi.html

श्रीमद्भागवतम् विज्ञम • कल्कि अवतार इंटरनेशनल • बिस्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट

